P: ISSN NO.: 2321-290X RNI : UPBIL/2013/55327 VOL-7* ISSUE-6* February- 2020
E: ISSN NO.: 2349-980X **Shrinkhla Ek Shodhparak Vaicharik Patrika**

भारत में सामाजिक परिवर्तन एवं प्रमुख संवैधानिक संशोधन : एक अध्ययन

Social Change and Major Constitutional Amendments in India: A Study

मुकेश कुमार वर्मा
सहायक प्रोफेसर,
राजनीति विज्ञान विभाग
राजस्थान विश्वविद्यालय,
जयपुर, राजस्थान, भारत

सारांश

सामाजिक परिवर्तन राष्ट्रीय विकास का द्योतक होते हैं। भारतीय समाज में अंग्रेजी शासनकाल में प्रारम्भ हुए सामाजिक परिवर्तन स्वतन्त्रता के पश्चात् और भी अधिक तेज हुए हैं। सामाजिक परिवर्तन के पोषक तत्वों में संविधान संशोधन भी की अपनी महत्त्वपूर्ण भूमिका है। संविधान संशोधन किसी भी समाज में सामाजिक परिवर्तन के वाहक होते हैं जिसको व्यावहारिकता के धरातल पर उतारने का कार्य जन प्रतिनिधी संस्था संसद के द्वारा संविधान संशोधनों के माध्यम से किया जाता है। अतः संसद विधि निर्माण एवं संविधान संशोधन के परिप्रेक्ष्य में लगातार ऐसी विधियों का निर्माण कर रही है जिनसे भारत की प्रचलित सामाजिक–आर्थिक–राजनीतिक व्यवस्था में परिवर्तन एवं प्रगति की नवीन भाषा परिलक्षित हो रही है। समय समय पर आवश्यक संसदीय विधियों के निर्माण एवं संविधान संशोधनों के विश्लेषण से स्पष्ट हो जाता है कि संसद ने विधि निर्माण एवं आवश्यक संशोधनों के द्वारा संविधान को सामाजिक परिवर्तन का अनुठा प्रलेख बना दिया है जिनसे सामाजिक परिवर्तन को नई दिशा मिली है। निःसन्देह अल्पकाल में ही 103 संविधान संशोधन संख्या की दृष्टि से अधिक लगते हैं किंतु देश की विविधताओं एवं जटिलताओं के समक्ष संशोधनों की संख्या महत्वपूर्ण नहीं है। महत्वपूर्ण यह है कि संवैधानिक संशोधन समाज को किस दिशा में ले जा रहें हैं। यद्यपि संसद द्वारा किये गये संविधान संशोधन सामाजिक परिवर्तन की ओर संकेत कर रहे हैं परन्तु आज भी भारतीय समाज अनेक समस्याओं से घिरा हुआ है अतः समाज में व्याप्त समस्याओं से मुक्ति दिलाकर समाज को सामाजिक परिवर्तन की ओर ले जाने में एक महत्वपूर्ण अभिकर्ता, नेतृत्व–कर्ता एवं वाहक के रूप में संसद एवं संसद द्वारा पारित संविधान संशोधनों की भूमिका निश्चित ही महत्वपूर्ण है।

Social changes are a sign of national development. The social changes that began in the British rule in Indian society have become even more rapid after independence. The constitutional amendment also has its own important role in the nutrients of social change. Constitutional amendments are the drivers of social changes in any society, which is carried out through constitutional amendments by the Parliament of the People's Representative. Therefore, Parliament is constantly constructing such laws in the context of law making and constitution amendment, which are reflecting the new language of changes and progress in the prevailing socio-economic-political system of India. From time to time, it is clear from the analysis of constitutional amendments and constitution of necessary parliamentary laws that Parliament has made the constitution a formidable document of social change through law making and necessary amendments which have given new direction to social change. Of course, in the short run, 103 constitution amendments seem to be more in terms of numbers, but the number of amendments is not significant in front of the country's diversity and complexity. It is important that in which direction the constitutional amendments are taking the society. Although constitutional amendments are signing towards social change, but even today our society is surrounded by many problems. So by providing freedom from the problems prevailing in the society and leading the society towards social change the role of Parliament and constitutional amendments are certainly very important.

मुख्य शब्द : Social Change, Constitution Amendment, Parliament, Parliamentary law etc.
(सामाजिक परिवर्तन, संविधान, संशोधन, संसद, संसदीय विधि आदि।)

प्रस्तावना

परिवर्तन प्रकृति का एक अटल एवं शाश्वत नियम है। मानव समाज भी उसी प्रकृति का अंग होने के कारण परिवर्तनशील है। अतः किसी भी ऐसे समाज की कल्पना नहीं की जा सकती जो पूर्णतया स्थिर हो अर्थात् अपरिवर्तनशील समाज का अस्तित्व नहीं हो सकता। समाज की इस परिवर्तनशील प्रकृति को स्वीकार करते हुए मैकाइवर लिखते हैं कि समाज परिवर्तनशील एवं गत्यात्मक है। परिवर्तन को संक्षिप्त रूप में पूर्व अवस्था या अस्तित्व में बदलाव कहा जा सकता है। इसी अर्थ के संदर्भ में कहा जा सकता है कि "समाज में पहले जो अवस्था थी यदि उस अवस्था में कोई हेर–फेर, बदलाव या अन्तर होता है तो उसे सामाजिक परिवर्तन कहा जाता है।" विभिन्न चिंतकों ने इस विषय पर समय–समय पर प्रकाश डाला है। एम.एन. श्रीनिवास ने भारतीय सामाजिक संरचना की प्रमुख विशेषता इसकी सामाजिक, सांस्कृतिक विविधता को बताया है। टॉलकाट पारसन्स ने अपनी पुस्तक 'सोशियल सिस्टम' में कहा कि समाज एक प्रकार की व्यवस्था है और उसके अन्दर स्थित अनेक वर्ग संरचनाओं की तरह है। इसी से प्रभावित होकर डेविड ईस्टन राज्य व सरकार को एक व्यवस्था के रूप में देखता है और उसे राजनीतिक व्यवस्था कहता है, जिसका कार्य है, "मूल्यों (संसाधनों) का वैधपरक आवंटन।" सामाजिक परिवर्तन राष्ट्रीय विकास का द्योतक होते हैं। सामाजिक परिवर्तन का तात्पर्य सामाज में घटित होने वाले परिवर्तनों से है। सामाजिक परिवर्तन एक ऐसी सामाजिक क्रांति है, जिससे सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक विकास की प्रक्रिया का सूत्रपात होता है। साधारण अर्थों में सामाजिक परिवर्तन का तात्पर्य है कि समाज की जरूरतों एवं आवश्यकताओं की प्रतिक्रिया स्वरूप संविधान की मौजूदा व्यवस्थाओं में परिवर्तन की जरूरत है, जिससे उसका आने वाली नई सामाजिक, आर्थिक एवं राजनीतिक जरूरतों के साथ तालमेल स्थापित किया जा सके। सामाजिक परिवर्तन से तात्पर्य नई सामाजिक व्यवस्था की स्थापना के लिए सामाजिक–आर्थिक–राजनीतिक संस्थाओं की पुनः स्थापना, पुर्नगठन एवं पुनः निर्माण से है। इन सामाजिक–आर्थिक–राजनीतिक व्यवस्थाओं को अनेक कारक प्रभावित करते हैं जो की परिवर्तन को जन्म देते हैं जैसे–प्राकृतिक कारक, प्राणीशास्त्रीय कारक, आर्थिक कारक, समाजिक कारक, वैश्वीकरण, उपभोक्तावाद, सांस्कृतिक कारक, उदारीकरण, निजीकरण, बाजारवाद, पाश्चात्यीकरण, नगरीकरण भौतिकवाद इत्यादि। समकालीन भारतीय समाज एक ऐसा पाश्वचित्र प्रस्तुत करता है जो अपनी परम्पराओं की सीमाओं के अन्तर्गत आधुनिकीकरण की ओर अग्रसर हो रहा है। भारतीय समाज में अंग्रेजी शासनकाल में प्रारम्भ हुए सामाजिक राजनीतिक परिवर्तन स्वतन्त्रता के पश्चात् और भी अधिक तेज हुए हैं। पश्चिमीकरण, लौकिकीकरण, आधुनिकीकरण, संस्कृतिकरण, नगरीकरण एवं औद्योगीकरण के परिणामस्वरूप भारतीय समाज में होने वाले परिवर्तनों ने परम्परागत लक्षणों के स्थान पर ऐसे नवीन लक्षण विकसित कर दिये हैं जिनसे सामाजिक परिवर्तनों की गतिशीलता में वृद्धि हुई है।

सामाजिक परिवर्तन के उपर्युक्त पोषक तत्वों की अपनी भूमिका और महत्व है परंतु इन कारकों के अतिरिक्त संविधान संशोधन भी सामाजिक परिवर्तन का एक महत्त्वपूर्ण कारक रहा है। अच्छे संविधान का यह गुण है कि वह समय की मांग को परिलक्षित करे, अतः आवश्यकताओं तथा परिस्थितियों में परिवर्तन के साथ संविधान में भी समयानुकूल परिवर्तन आवश्यक है। वर्तमान समय के अधिकांश संविधानों के विकास का प्रमुख स्त्रोत संशोधन प्रक्रिया है जिसका उल्लेख संविधान के प्रलेख में कर दिया जाता है। संविधान संशोधन किसी भी समाज में सामाजिक परिवर्तन के वाहक होते हैं जिसको अमली जामा पहनाने एवं व्यावहारिकता के धरातल पर उतारने का महत्त्वपूर्ण कार्य भारतीय लोकतन्त्र की जन प्रतिनिधी संस्था संसद के द्वारा संविधान संशोधनों के माध्यम से किया जाता है और इसके महत्व को नकारा नहीं सकता।

भारतीय संविधान निर्मात्री सभा ने एक बड़े उद्देश्य और उत्साह को लेकर संविधान की रचना की। उद्देश्य को स्पष्ट करते हुए जवाहरलाल नेहरू ने संविधान निर्मात्री सभा को इन शब्दों में संबोधित किया ''इस सभा का प्रथम कार्य एक नये संविधान के माध्यम से भारत को स्वतंत्र करना, भूखी–नंगी जनता के लिए रोटी और कपड़े की व्यवस्था करना और प्रत्येक भारतीय को अपनी क्षमता के अनुरूप विकास करने का पूर्ण अवसर प्रदान करना है।'' डॉ. सर्वपल्ली राधाकृष्णनन् ने तो दार्शनिक दृष्टि से समस्या को समझाते हुए स्पष्ट किया कि ''एक सामाजिक–आर्थिक क्रांति की आवश्यकता है जिससे ने केवल जन–साधारण की मूलभूत आवश्यकताओं की ही पूर्ति हो बल्कि भारतीय समाज के ढांचे में मौलिक परिवर्तन आये।'' परिवर्तन और आर्थिक पुननिर्माण के कार्य को संपन्न किया जाना चाहिए अन्यथा इसके दुष्परिणाम निकल सकते हैं। इन विचारों की अभिव्यक्ति एक अन्य सदस्य के. संथानम की चेतावनी में निहित है, ''भारत को त्वरित और हिंसक क्रांति के बीच एक रास्ता चुनना है क्योंकि भारतीय जनता आनी न्यूनतम आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु अब लम्बे समय तक इंतजार नहीं करेगी।'' संथानम ने तो तीन क्रांतियों–राजनीतिक, सामाजिक एवं आर्थिक क्रांति की बात कही। राजनीतिक क्रांति आजादी प्राप्ति पर समाप्त हो जायेगी। सामाजिक क्रांति का अर्थ भारत को जन्म, धर्म, रीति–रिवाज एवं योग्यता एवं धर्मनिरपेक्ष शिक्षा पर आधारित आधुनिक सामाजिक ढांचे का पुननिर्माण करना है। आर्थिक क्रांति से अभिप्राय दकियानूसी ग्रामीण अर्थव्यवस्था का वैज्ञानिक एवं नियाजित कृषि तथा उद्योग व्यवस्था में रूपान्तरण है। संविधान निर्मात्री सभा के अध्यक्ष डॉ. राजेन्द्र प्रसाद ने राष्ट्र को आश्वस्त किया कि असेम्बली और सरकार का ध्येय 'गरीबी और मोहताजी को हटाना है, शोषण और ऊँच–नीच को मिटाकर उन्नत जीवन स्तर को सुनिश्चित करना है। एक अन्य सदस्य बी.दास ने तो कहा कि भूख मिटाना और प्रत्येक नागरिक को सामाजिक न्याय दिलाना सरकार का धर्म है। सार यह है कि संविधान निर्मात्री सभा के समक्ष उद्देश्य सुस्पष्ट था और वह भारत का नवनिर्माण करना था। इस नवनिर्माण का अर्थ एक जनतांत्रिक, धर्मनिरपेक्ष, शोषण मुक्त एवं सामाजिक न्याय पर आधारित

व्यवस्था की रचना करना था। संविधान निर्माताओं के मस्तिष्क में यह भी सुस्पष्ट था कि यदि इस ध्येय को प्राप्त नहीं किया गया तो संविधान अर्थहीन हो जायेगा। पुनः जवाहरलाल नेहरू के शब्दों में ''यदि हम इस समस्या का समाधान नहीं ढूँढ पाये तो हमारे कागज पर लिखा गया संविधान बेकार और बेमानी हो जायेगा।'' विल्सन ने कहा है कि "संविधान को निश्चित रूप से जीवनपरक होना चाहिए, उसके तथ्य हैं–राष्ट्र के विचार और स्वभाव। संविधान प्रत्येक राष्ट्र का मूल कानून होता है। साथ ही वह जनता की परम्पराओं, आशाओं एवं आवश्यकताओं का प्रतिबिम्ब होता है। संविधान समाज की वर्तमान समस्याओं का उपचार सुझाता है और भविष्य में उत्पन्न होने वाली कठिनाईयों से बचने का रास्ता बताता है। समाज की नई आवश्यकताओं की प्रतिक्रिया स्वरूप संविधान की मौजूदा व्यवस्थाओं में परिवर्तन की जरूरत होती है, जिससे नई आवश्यकताओं के अनुसार तालमेल बैठा सकें। इसी संदर्भ में लॉर्ड मैकाले ने कहा है कि, "क्रांति का मुख्य कारण यह है कि राष्ट्र तो आगे बढ़ता रहता है संविधान अपने स्थान पर यथावत बना रहता है।" भारतीय संविधान के निर्माता भी देश के संविधान में संशोधन की आवश्यकता से परिचित थे। भारतीय संविधान निर्माताओं ने संविधान संशोधन के लिए संविधान में मध्यम मार्ग को अपनाया है। उन्होंने माना कि संविधान न इतना लचीला हो कि साधारण बहुमत लिए कोई भी दल अथवा दलों का समूह जब चाहे संविधान को बदल दे और न इतना कठोर हो कि अत्यंत आवश्यक होने पर भी व्यवस्थापिका उसमें संशोधन ही न कर सके। दोनों ही स्थितियां अवांछनीय ही नहीं हानिकारक है, दुष्परिणाम लिये हुये है। अत्यधिक लचीला होने पर संवैधानिक विधि की गरिमा नष्ट होती है, अराजक स्थिति उत्पन्न होने की संभावना बन सकती है क्योंकि समय के साथ देश में परिवर्तन आता है और कानून उसे रोकता है। भारतीय संविधान में संशोधन की ऐसी प्रक्रिया को अपनाया गया है जो ना तो ब्रिटेन के संविधान की भांति लचीली है और ना ही अमेरिका के संविधान की तरह कठोर है जिसका उल्लेख भारतीय संविधान के अध्याय –20 के अनुच्छेद –368 में किया गया है। भारतीय लोकतांत्रिक समाज में सामाजिक परिवर्तन का सूत्रपात संसदीय विधियों द्वारा शान्तिपूर्ण तरीके से ही संभव हो सकता है। अतः समाजवादी समाज की संरचना में सामाजिक परिवर्तन का दायित्व संसद को सौंपा गया है और संसद विधि निर्माण एवं संविधान संशोधन के परिप्रेक्ष्य में लगातार ऐसी विधियों का निर्माण कर रही है जिनसे भारत की प्रचलित सामाजिक–आर्थिक–राजनीतिक संस्थाओं की कार्यप्रणाली एवं व्यवस्था में परिवर्तन एवं प्रगति की नवीन भाषा परिलक्षित हो रही है। समय समय पर आवश्यक संसदीय विधियों के निर्माण एवं संविधान संशोधनों के अध्ययन, विवेचन एवं विश्लेषण से स्पष्ट हो जाता है कि संसद ने विधि निर्माण एवं आवश्यक संशोधनों के द्वारा संविधान को सामाजिक परिवर्तन का अनुठा प्रलेख बना दिया है।

सामाजिक परिवर्तन और प्रमुख संवैधानिक संशोधन

स्वतंत्रता प्राप्ति के समय की सामाजिक, आर्थिक परिस्थितियों के परिवेश में संविधान निर्माताओं ने संविधान के उद्देश्यों को संविधान की प्रस्तावना में प्रत्यक्ष रूप से रखा। संविधान की प्रस्तावना में दिये गये उद्देश्यों से भारतीय राज्य का मुख्य ध्येय सामाजिक–आर्थिक–राजनीतिक न्याय की प्राप्ति स्पष्ट होता है। भारत में समाजवादी समाज की रचना में शान्तिपूर्ण सामाजिक परिवर्तन के नेतृत्व का दायित्व संसद को सौंपा गया है। संसद द्वारा प्रारंभ से वर्तमान तक सामाजिक परिवर्तन की दृष्टि से ऐसे अनेक महत्वपूर्ण संवैधानिक संशोधन पारित किये गए हैं जिनसे सामाजिक परिवर्तन को नई दिशा मिली है जिन्हें संपत्ति के अधिकार एवं भूमि सुधार को लागू करने के लिए किए गये संवैधानिक संशोधन, लोकतंत्र के विस्तार एवं सुदृढ़ीकरण के लिए किए गए संशोधन तथा दलित, अन्य पिछड़ी जातियों एवं अन्य पहलुओं से संबंधित संवैधानिक संशोधनों की श्रेणियों में विभाजित किया जा सकता है, जो कि निम्नांकित है –

प्रथम संविधान संशोधन अधिनियम,1951 सामाजिक न्याय स्थापित करने की दिशा में यह पहला व महत्वपूर्ण कदम था। इसमें प्रावधान किया गया कि दलितों व पिछड़ों के शैक्षणिक, आर्थिक एवं सामाजिक उत्थान हेतु बनाये गये कानूनों, विशेष सुविधाओं व आरक्षण को इस आधार पर चुनौती नहीं दी जा सकती कि वे भेदभावपूर्ण हैं। इसी संशोधन द्वारा विभिन्न राज्यो द्वारा पारित भूमि सुधार अधिनियमों को नौवीं सूची में सम्मिलित कर न्यायालय की परिधि से बाहर कर जमींदारी उन्मूलन की नीति की नीति को लागू किया गया। आठवां संविधान संशोधन अधिनियम, 1960 : संविधान के इस संशोधन द्वारा अनुच्छेद – 334 में संशोधन करके अनुसूचित जाति, जनजाति एवं ऐग्लोइंडियन्स के लिए आरक्षण की अवधि में 26 जनवरी 1960 से दस वर्षों के लिए बढा दी गयी। 17वां संविधान संशोधन अधिनियम, 1964 : यह अधिनियम अनुच्छेद 31(क) में उल्लिखित सम्पदा की परिभाषा का संशोधन करता है। इसमें यह प्रावधान किया गया कि यदि राज्य किसी ऐसी भूमि का अधिग्रहण करता है, जो उसके स्वामी की कृषि के अधीन हो और भूमि की अधिकतम सीमा के भीतर आती हो, तो उस सम्पत्ति के बाजार मूल्य के आधार पर राज्य को मुआवजा देना होगा। इस संशोधन द्वारा रैयतवाड़ी बंदोबस्त तथा अन्य भूमि सुधार अधिनियमों के अंतर्गत प्रबंधित भूमि भी सम्पदा में सम्मिलित कर ली गई। 23वां संविधान संशोधन अधिनियम, 1969 : इस संशोधन अनुसचित जातियों तथा जनजातियों के लिए संसद तथा राज्य विधानमंडलों में स्थानों के आरक्षण और आंग्ल–भारतीय समुदाय के सदस्यों को मनोनीत करने की अवधि को दस वर्षों के लिए बढा दिया गया। 25वां संविधान संशोधन अधिनियम, 1971 इस संशोधन द्वारा नीति निदेशक सिद्धान्तो को मौलिक अधिकारों पर प्रधानता दी गई। सामाजिक–आर्थिक न्याय स्थापित करने की दिशा में यह महत्वपूर्ण प्रयास था। इसमें यह प्रावधान किया गया कि यदि सरकार किसी सम्पत्ति या भूमि को अधिगृहीत करके मुआवजे की जो राशि तय करती है तो उस राशि की पर्याप्तता संबंधी विवाद के लिए न्यायालय में चुनौती नहीं दी जा सकती। साथ ही अधिग्रहण के बदले में मुआवजा

शब्द उसके स्थान पर राशि शब्द रख दिया गया। एक नया खंड जोड़कर यह उपबंध बनाया गया कि यदि किसी अधिनियम में यह घोषणा है कि वह अनुच्छेद–39 के खंड (ख) और (ग) के निदेशक तत्वों को प्रभाव देने के लिए है तो उसे इस आधार पर चुनौती नहीं दी जा सकती है कि यह भौतिक अधिकारों को क्षति पहुंचाता है। 26वां संविधान संशोधन अधिनियम, 1971 : इसके द्वारा देशी रियासतों के पूर्व नरेशो को मिलने वाले प्रिवीपर्सों को समाप्त कर दिया गया। 29वां संविधान संशोधन अधिनियम, 1972 : इसके द्वारा केरल भूमि सुधार अधिनियम को नौवीं सूची में सम्मिलित कर लिया गया। यहां पर उल्लेखनीय है कि भूमि सुधार कानून न्यायालयों में चुनौती दिये जाने लगे। फलस्वरूप भूमि सुधारों की गति अत्यंत धीमी पड़ गई। सामाजिक परिवर्तन की दिशा अवरूद्व हो गई। नौवीं सूची में भूमि सुधार संबंधी कानूनों को सम्मिलित करने से एक बड़ी दिक्कत दूर हुई। 34वां संविधान संशोधन अधिनियम, 1974 : इस संशोधन द्वारा विभिन्न राज्यों द्वारा पारित किए गए 20 भूमि सुधार कानूनों को संविधान की 9वीं अनुसूची में सम्मिलित करके उन्हें सरंक्षण प्रदान किया गया। 42वां संविधान संशोधन अधिनियम, 1976 : इस संशोधन द्वारा संविधान की प्रस्तावना में प्रभुत्व संपन्न लोकतांत्रिक गणराज्य शब्दों के स्थान पर प्रभुत्व संपन्न समाजवादी, धर्मनिरपेक्ष, लोकतांत्रिक गणराज्य शब्द और राष्ट्र की एकता शब्दों के स्थान पर राष्ट्र की एकता और अंखण्डता शब्द स्थापित किए गए। और साथ में मौलिक कर्त्तव्य भी समाविष्ट हुए। 44वां संविधान संशोधन अधिनियम, 1978 : इसके द्वारा सम्पत्ति के अधिकार को मौलिक अधिकारों की सूची से निकाल दिया गया। अनुच्छेद 20 और 21 में दिये गये मौलिक अधिकारो को आपातकाल मे भी स्थगित न किये जाने की व्यवस्था की गई। 45वां संविधान संशोधन अधिनियम, 1980 : अनुसूचित जाति, जनजाति एवं ऐंग्लो इंडियन्स के हेतु पुनः 10 वर्ष के लिए आरक्षण में वृद्वि की गई। 47वां संविधान संशोधन अधिनियम, 1984 : भूमि सुधार कानूनों को नौवीं सूची में सम्मिलित किया गया। 49वां संविधान संशोधन अधिनियम, 1984 : त्रिपुरा ट्राइबल एरियाज आटोनोमस डिस्ट्रिस कोंसिल को संवैधानिक मान्यता दी गई। 51वां संविधान संशोधन अधिनियम, 1984 : अनुसूचित जनजाति को मेघालय, नागालैण्ड, अरूणाचल प्रदेश और मिजोरम से लोकसभा की सीटों में आरक्षण दिया गया और इसी प्रकार नागालैंड और मिजोरम की विधानसभाओं में भी आरक्षण किया गया। 57वां संविधान संशोधन अधिनियम, 1987 : इस संशोधन द्वारा नागालैण्ड, मेघालय, मिजोरम और अरूणायल प्रदेश में अनुसूचित जनजातियों के लिए लोकसभा में स्थान आरक्षित करने के लिए तथा नागालैण्ड और मेघालय की विधान सभाओं में अनुसूचित जनजातियों के लिए स्थानों का आरक्षण करने लिए अनुच्छेद 330 और 332 को संशोधित किया गया। 61वां संविधान संशोधन अधिनियम, 1988 : मत देने की आयु 21 वर्ष से घटा कर 18 वर्ष कर दी गई। 62वां संविधान संशोधन अधिनियम, 1989 : अनुसूचित जाति, जनजाति एवं ऐंग्लोइंडियन्स हेतु पुनः 10 वर्ष के लिए लोकसभा और राज्य विधानसभाओं में आरक्षण की व्यवस्था की गई। 65वां संविधान संशोधन अधिनियम, 1990 : अनुसूचित जाति एवं जनजाति के लिए राष्ट्रीय आयोग की स्थापना की गई। 72वां संविधान संशोधन अधिनियम, 1992 : इस संविधान संशोधन अधिनियम द्वारा संविधान के अनुच्छेद–332 में 3(ख) को अंतःस्थापित किया गया। इसके द्वारा त्रिपुरा राज्य की विधान सभा में अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के लिए जनसंख्या के अनुपात के आधार पर आरक्षण की व्यवस्था की गई। 73वां संविधान संशोधन अधिनियम, 1992 : यह अत्यंत महत्वपूर्ण संशोधन है। इस संविधान संशोधन अधिनियम द्वारा संविधान में एक नया भाग–9 तथा ग्यारवहीं अनुसूची को जोड़ा गया। इस अधिनियम द्वारा पंचायती राज व्यवस्था को संवैधानिक दर्जा प्रदान किया गया। इस अधिनियम में अनुसूचित जाति, जनजाति के लिए पंचायतों में आरक्षण, महिलाओं के लिए 1/3 आरक्षण का प्रावधान किया गया। 74वां संविधान संशोधन अधिनियम, 1992 अनुसूचित जाति, जनजाति के लिए शहरी और स्थानीय स्वशासी संस्थाओं में आरक्षण एवं महिलाओं के लिए 1/3 आरक्षण का प्रावधान किया गया। 76वां संविधान संशोधन अधिनियम, 1994 : इस अधिनियम के माध्यम से संविधान की 9वीं अनुसूची में संशोधन करके एक नया उपबंध जोडा गया। इस अधिनियम संशोधन द्वारा तमिलनाडु राज्य की सेवाओं एवं शिक्षण संस्थाओं में अनुसूचित जाति, जनजाति एवं पिछड़े वर्गों के लिए 69 प्रतिशत आरक्षण का प्रावधान किया गया। 77वां संविधान संशोधन अधिनियम, 1995 : अनुसूचित जाति, जनजाति के लिए पदोन्नति में आरक्षण की व्यवस्था की गई। 79वां संविधान संशोधन अधिनियम, 1999 : इस अधिनियम संशोधन के अनुसार अनुसूचित जातियों तथा अनुसूचित जनजातियों के लिए आरक्षण की अवधि 26 जनवरी, 2010 तक के लिए बढा दी गयी है। 81वां संविधान संशोधन अधिनियम, 2000 : इस संविधान संशोधन अधिनियम के माध्यम से सर्वोच्च न्यायालय द्वारा निर्धारित की गयी 50 प्रतिशत आरक्षण की सीमा को बढाया जा सकेगा। अब सरकार अनुसूचित जाति एवं जनजातियों के लिए आरक्षित रिक्त पदों को भरने के लिए 50 प्रतिशत से ज्यादा आरक्षण की व्यवस्था करेगी। 82वां संविधान संशोधन अधिनियम, 2000 : इस अधिनियम द्वारा अनुसूचित जाति, जनजाति के लिए पदोन्नति में अंकों एवं स्तर के मामले में दी गई छूट की पुनरावृत्ति की गई। इस अधिनियम द्वारा सरकार अनुसूचित जाति एवं जनजाति के उम्मीदवारों को सरकारी नौकरियों के न्यूनतम योग्यता सम्बंधी प्रावधानों से छूट दिला सकेगी। इन वर्गों के सरकारी कर्मचारी भी कार्य मूल्यांकन मापदंडों में छूट के आधार पर प्रोन्नति प्राप्त कर सकेंगे। 85वां संविधान संशोधन अधिनियम, 2002 : इस संशोधन द्वारा अनुसूचित जाति, जनजाति के लिए पदोन्नति में आरक्षण की व्यवस्था की गई। इस संशोधन द्वारा अनुच्छेद 16(4क) को संशोधित करते हुए भारत सरकार के राजपत्र (गजट) में प्रकाशित किया गया। यह सरकारी सेवा में रत अनुसूचित जाति व अनुसूचित जनजातियों के व्यक्तियों से संबंधित है। इसके द्वारा उन्हें 1995 के आरक्षण नियमों के तहत प्रोन्नति के लाभ मिल सकेंगे। इस संशोधन में अनुसूचित जाति व

अनुसूचित जनजातियों के सरकारी कर्मचारियों के अंतर्गत अनुवर्ती वरिष्ठता के आधार पर प्रोन्नति देने की व्यवस्था है। 86वां संविधान संशोधन अधिनियम, 2002 : इस संशोधन द्वारा प्राथमिक शिक्षा को मुफ्त एवं अनिवार्य बनाते हुए इसे मौलिक अधिकार का दर्जा प्रदान किया गया। संविधान के अनुच्छेद–21 के अनुसार – सरकार राज्य द्वारा निर्धारित विधि के अनुसार 6 से 14 की आयु के बच्चों को मुफ्त व अनिवार्य शिक्षा प्रदान करेगी। यह अनुच्छेद इसे मौलिक कर्तव्यों (अनुच्छेद–51क) में शामिल करते हुए अभिभावकों से अपेक्षा करता है कि वे अपने बच्चों को स्कूल भेजेंगे। इस संशोधन के द्वारा संविधान के अनुच्छेद–45 को संशोधित किया गया है, जिसमें 6 वर्ष तक की आयु के सभी बच्चों को प्रारम्भिक बाल्य सुरक्षा तथा शिक्षा उपलब्ध कराने का उल्लेख था। 87वां संविधान संशोधन अधिनियम, 2003 : इस संविधान संशोधन में व्यवस्था दी गई है कि राज्य विधानसभा के निर्वाचन क्षेत्रों के परिसीमन हेतु वर्ष 2001 के जनसंख्या संबंधी आंकड़ों को आधार बनाया जाएगा। इसमें यह भी प्रावधान है कि 2001 के जनंसख्या संबंधी आंकड़े लोक सभा व राज्य सभा में अनुसूचित जाति व जनजातियों के सदस्यों के लिए आरक्षण का आधार होंगे। 89वां संविधान संशोधन अधिनियम, 2008 : इस संविधान संशोधन के अनुसार राष्ट्रीय अनुसूचित जाति व जनजाति आयोग को दो पृथक् भागों–राष्ट्रीय अनुसूचित जाति आयोग तथा राष्ट्रीय अनुसूचित जनजाति में विभाजित किया गया है। इसके द्वारा संविधान में अनुच्छेद 388 (क) जोड़ा गया है। राष्ट्रीय जनजाति आयोग में एक अध्यक्ष, उपाध्यक्ष तथा तीन अन्य सदस्य होंगे। इन पदाधिकारियों की सेवा शर्तों व अवधि आदि का निर्धारण समय–समय पर राष्ट्रपति द्वारा निश्चित किया जाएगा। राष्ट्रीय अनुसूचित जाति आयोग में भी एक अध्यक्ष, एक उपाध्यक्ष तथा तीन अन्य सदस्य होंगे। इनकी सेवा शर्तें इत्यादि का निर्धारण भी राष्ट्रपति द्वारा ही निश्चित किया जाएगा। 90वां संविधान संशोधन अधिनियम, 2003 :इसमें यह प्रावधान है कि असम के राज्य विधानसभा में बोडोलैंड क्षेत्र के जिलों के अनुसूचित जाति व जनजातियों के प्रतिनिधियों की संख्या, जो बोडोलैंड के अस्तित्व में आने से पूर्व निर्धारित थी, वह जारी रहेगी। 93वां संविधान संशोधन अधिनियम, 2005 : इस अधिनियम द्वारा संविधान के अनुच्छेद 15 में एक नया उपबंध (5) जोड़ा गया है। इस अधिनियम के अंतर्गत राज्यों को सरकारी अनुदान के बिना ही चल रही निजी शैक्षणिक संस्थाओं में अनुसूचित जाति/जनजाति तथा सामाजिक दृष्टि से पिछड़े वर्गों के प्रवेशार्थियों को प्रवेश में आरक्षण उपलब्ध कराने का अधिकार प्राप्त हो गया है। 94वां संविधान संशोधन अधिनियम, 2006 : इस अधिनियम के माध्यम से संविधान के अनुच्छेद–164(1) को संशोधित करके छत्तीसगढ और झारखण्ड में जनजातीय मामलों की देख–रेख हेतु पृथक मंत्री की नियुक्ति का अनिवार्य प्रावधान किया गया है, जबकि बिहार को इससे बाहर कर दिया गया है। अब इस संशोधित सूची में ओडीशा, झारखण्ड, छत्तीसगढ और मध्यप्रदेश है, जहां जनजातीय मामलों की देखरेख हेतु पृथक मंत्री की नियुक्ति की जानी अनिवार्य है। 95वां संविधान संशोधन अधिनियम, 2009 : इस संविधान संशोधन अधिनियम द्वारा संविधान के अनुच्छेद 334 में संशोधन किया गया है। इसके अंतर्गत लोकसभा एवं राज्य विधानसभाओं में आरक्षण की व्यवस्था को 10 वर्ष के लिए और आगे बढा दिया गया है। 1999 के 79वें संविधान संशोधन द्वारा बढाई गई 10 वर्ष की अवधि 25 जनवरी, 2010 को समाप्त हो गई। इससे पूर्व इसकी अवधि 10–10 वर्ष के लिए 8वें, 23वें, 45वें, 62वें एवं 79वें संविधान संशोधन द्वारा बढाई जाती रही है। 97वां संविधान संशोधन अधिनियम, 2011 : इस अधिनियम को 12 जनवरी, 2012 को राष्ट्रपति की स्वीकृति प्राप्त हुई। इसके द्वारा संविधान के भाग–III में अनुच्छेद 19 के खण्ड (1)के उपखण्ड (ग) में या संघ के बाद या सहकारी समितियां शब्द जोड़ा गया है। भाग–IV में अनुच्छेद 43 ख जोड़ा गया है तथा भाग– 9 के पश्चात् भाग–9ख जोड़ा गया है। इनमें सहकारी समितियों के गठन, विनियमन एवं विधि संबंधी प्रावधान किए गए है। 102वां संविधान संशोधन अधिनियम, 2017 : इस संविधान संशोधन अधिनियम द्वारा ओबीसी आयोग को संवैधानिक दर्जा दिया गया। 103वां संविधान संशोधन अधिनियम, 2019 : इस अधिनियम में आर्थिक रूप से कमजोर सामान्य वर्ग को सरकारी नौकरियों और शिक्षा के क्षेत्र में 10 प्रतिशत आरक्षण का प्रावधान किया गया है।

निःसन्देह अमरीका, आस्ट्रेलिया एवं अन्य कई देशों के संविधानों के मुकाबले हमारा संविधान अल्पायु है। भारतीय संविधान के लागू होने के 72 वर्षों के अल्पकाल में ही 103 संविधान संशोधन संख्या की दृष्टि से अधिक लगते हैं किंतु भारत जैसे विशाल देश की सामाजिक, सांस्कृतिक, भौगोलिक विविधताओं एवं सामाजिक–आर्थिक जटिलताओं के समक्ष संविधान संशोधनों की संख्या महत्वपूर्ण नहीं है। महत्वपूर्ण यह है कि संवैधानिक संशोधनों का सामाजिक व्यवस्था पर कितना अनुकूल प्रभाव रहा है और वे संविधान संशोधन समाज को किस दिशा में ले जा रहें हैं। इन संशोधनों के द्वारा संविधान में नए अध्याय और अनुच्छेद जोड़े गये, पुराने अनुच्छेदों का संशोधन, परिवर्द्धन तथा निरसन किया गया और इन संशोधनों का उद्देश्य देश की सामाजिक व्यवस्था में आमूल परिवर्तन लाना था।

संवैधानिक संशोधनों का सामाजिक व्यवस्था पर प्रभाव

आधुनिक लोकतांत्रिक संविधानों की संरचना इस प्रकार की जाती है कि वे आधुनिक समाजों की उभरती आवश्यकताओं को सफलतापूर्वक पूरा कर सकें। परंतु संविधान अचल अथवा स्थिर नहीं होतें, जरूरतों एवं जन अपेक्षाओं में बदलाव के साथ–साथ संविधानों में भी संशोधन किए जाते हैं, ताकि वे समाज की नई आवश्यकताओं को पूरा कर सकें। वस्तुतः संविधान की सफलता केवल पवित्र विचारों पर निर्भर नहीं करती बल्कि उन उद्देश्यों को व्यवहार में सफलतापूर्वक प्राप्त करने में होती है। जैसाकि भारतीय संविधान के निर्माण पर बर्नार्ड शॉ ने अपनी प्रतिक्रिया व्यक्त करते हुए कहा था कि पन्नों पर लिख देने मात्र से संविधान नहीं बन जाता, उसके पीछे नैतिक शक्ति का होना बहुत जरूरी है। सार यह है कि अच्छे से अच्छा संविधाान बेकार हो जाता है यदि उसका संचालन करने वालों में चारित्रिक बल न हो। अतः

कोई भी सामाजिक–राजनीतिक व्यवस्था अमूर्त गुणों के बल पर जीवित न रहकर जनता की जायज मांगों को पूरा करने की समर्थता पर जीवित रहती है। किसी भी संविधान का निर्माण करते समय भविष्य में उत्पन्न होने वाली सभी परिस्थितियों की ठीक से कल्पना नहीं की जा सकती और बदलती हुई परिस्थितियों के अनुरूप संविधान में परिवर्तन करना भी आवश्यक होता है। यही कारण है की भारतीय संसद संविधान संशोधन के परिप्रेक्ष्य में लगातार ऐसी विधियों का निर्माण कर रही है जिनसे हमारा सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक उत्थान संभव हो सके। संविधान संशोधनों के विश्लेषण से स्पष्ट हो जाता है कि भारत की प्रचलित सामाजिक व्यवस्था में आवश्यक संशोधनों द्वारा व्यापक परिवर्तन कर संसद ने सामाजिक परिवर्तन में महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वहन किया है। परिणामस्वरुप विगत दशकों में विभिन्न संविधान संशोधनों के अंर्तगत मानवाधिकारों की जो पैरवी की है उससे आम नागरिक में लोकतंत्र के प्रति आस्था एवं विश्वास में वृद्वि हुई है। विभिन्न संविधान संशोधनों के द्वारा स्त्रियों, बच्चों, दलितों, किसानों एवं अल्पसंख्यकों के हितों व अधिकारों का संरक्षण व संवर्धन हुआ है जिससे सामाजिक न्याय को बल मिला है। अनुसूचित जाति, जनजाति, पिछड़ा वर्ग एवं आर्थिक रूप से कमजोर सामान्य वर्ग को सरकारी नौकरियों और शिक्षा के क्षेत्र में प्रतिनिधित्व मिलने से इन वर्गो का सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक उत्थान संभव हो सका जिससे ये वर्ग समाज की मुख्य धारा से जुड सके । भूमि के वितरण, आवंटन व भूमि सुधार से सम्बन्धित संविधान संशोधनों द्वारा किसानों की समस्याओं का समाधान संभव हो सका। मुफ्त एवं अनिवार्य शिक्षा के प्रावधान सम्बन्धित संविधान संशोधन द्वारा बच्चों तक शिक्षा की पहुंच संभव हो सकी। सामाजिक, राजनीतिक परिवर्तनों के माध्यम से भारतीय जनता में सामाजिक और राजनीतिक घटनाओं के प्रति जागरूकता बढ़ी है, जिससे उनकी सामाजिक, राजनीतिक क्षेत्र में सहभागिता बढ़ सकी है। परिणामतः भारतीय समाज में अब परम्परागत संकीर्ण मुद्दों के स्थान पर स्वतन्त्रता, समानता, न्याय एवं बन्धुता पर आधारित सुशासन की आकांक्षा निरन्तर बढ़ी है। सार रूप में ये संशोधन मौलिक अधिकारों, राज्य नीति के निर्देशक तत्वों, मौलिक कर्त्तव्यों, राज्यों के पुनर्गठन, सातवीं अनुसूची में विधायी विषय, प्रशासनिक ट्रिबुनल एवं अन्य ऐसे विविध विषयों से संबंधित है जिनका सरोकार सामाजिक परिवर्तन से है।

निष्कर्ष

यद्यपि कोई भी संविधान सदा के लिए नहीं बनता। यह बात संविधान निर्मात्री सभी में भी अनेक सदस्यों ने कही थी। वे इस बात से सुविज्ञ थे कि बदलते परिवेश एवं बढती जन आंकाक्षाओं को किसी कानूनी ढांचे में बांधा नहीं जा सकता। एक सदस्य एच.वी.कामथ ने कहा था, ''यदि संविधान लचीला नहीं है तो इसमें अनेक खतरे निहित है क्योंकि इसके अन्तर्गत सामाजिक परिवर्तन संभव नहीं है। यदि संविधान जन आंकाक्षाओं के अनुरूप नहीं है, देश की भावी प्रगति को अवरूद्व करता है तो एक हिंसक क्रांति होगी। अतः आजादी के बाद विभिन्न संविधान संशोधन किये गये जैसे – संपत्ति के अधिकार की समाप्ति, भूमि सुधार कानूनों को लागू करने में आई बाधाओं को दूर करने के लिए नौंवी अनुसूची का सृजन, बैंकों का राष्ट्रीयकरण, प्रिवीपर्सों की समाप्ति, सरकारी नौकरियों एवं शिक्षा संस्थाओं के दाखिले में अनुसूचित जातियों, जनजातियों एवं ओ.बी.सी. के लिए आरक्षण का प्रावधान, 6 से 14 वर्ष की आयु के बच्चों के लिए मुफ्त एवं अनिवार्य शिक्षा का प्रावधान, पंचायत एवं स्थानीय स्वशासन संस्थाओं का सुदृढीकरण, उच्च वर्ग के गरीब लोगों को सरकारी नौकरियों और शिक्षा के क्षेत्र में 10 प्रतिशत आरक्षण आदि जो एक व्यापक सामाजिक परिवर्तन की ओर संकेत कर रहे हैं। फिर भी संवैधानिक संस्थाओं का निरन्तर ह्रास, जन–जागृति का अभाव, व्यापक अशिक्षा, ग्रामीण क्षेत्रों में मैला ढोने, छुआछूत की प्रथा की उपस्थिति, गरीब–अमीर के बीच बढती खाई आज आजादी के इतने सालों के बावजूद भी कायम है। इस तथ्य से इंकार नहीं किया जा सकता कि भारत जैसे विशालकाय एवं विविधता से पूर्ण देश में सामाजिक परिवर्तन मात्र संविधान के भरोसे व्यावहारिक धरातल पर नहीं उतारा जा सकता, उसके लिए अन्य स्तरों पर भी समानान्तर प्रयास किये जाने की जरूरत है। उसके लिए सरकार की इच्छा शक्ति एवं जन जागृति आवश्यक है। सरकार को चाहिये कि आरक्षण के सभी पहलुओं को दृष्टिगत रखते हुए अनुसूचित जाति, जनजाति एवं पिछड़े वर्गों के लिए आरक्षण को सुनिश्चित किया जाये। साथ ही इन वर्गों के आरक्षण की सुरक्षा के लिए न्याय अदालतों अथवा ट्रिब्युनलों की स्थापना की जाये। सार्वजनिक उपक्रमों का निजीकरण करते समय यह सुनिश्चित किया जाये कि आरक्षण की नीति चलती रहेगी। भूमि सुधार करते समय भूमि का वितरण, आवंटन तथा अन्य सुविधायें अनुसूचित जाति तथा जनजाति को मुहैय्या कराई जाये। अनुसूचित जाति, जनजाति (अत्याचार निवारण) अधिनियम 1989 को सशक्त बनाकर लागू किया जाये। बेगार एवं जबरन श्रम के प्रतिबंध को सुनिश्चित किया जाये। अतः बन्धुआ मजदूर मुक्ति एवं पुनर्वास हेतु राष्ट्रीय अथोरिटी की तत्काल स्थापना की जानी जाये आदि। सारतः कहा जा सकता है कि यद्यपि संसद द्वारा किये गये संविधान संशोधन सामाजिक परिवर्तन की ओर संकेत कर रहे हैं परन्तु आज भी भारतीय समाज अनेक समस्याओं से घिरा हुआ है अतः समाज में व्याप्त समस्याओं से मुक्ति दिलाकर समाज को सामाजिक परिवर्तन की ओर ले जाने में एक महत्वपूर्ण अभिकर्ता, नेतृत्व–कर्ता एवं वाहक के रूप में संसद एवं संसद द्वारा पारित संविधान संशोधनों की भूमिका निश्चित ही महत्वपूर्ण है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

अग्रवाल, आर.सी., "इण्डियन पोलिटिकल सिस्टम", एस चन्द एण्ड कम्पनी, नई दिल्ली, 2010

आस्टिन, ग्रेनविल, "इण्डियन कांस्टिट्यूशन कॉर्नरस्टोन ऑफ अ नेशन", ऑक्सफॉर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, नई दिल्ली, 1966

भारत का संविधान,"सेन्ट्रल लॉ पब्लिकेशन", इलाहाबाद, 2014

बाम्भरी, सी.पी., "पोलिटिक्स इन इण्डिया", सिपरा पब्लिकेशन, नई दिल्ली, 1993
बाम्भरी, सी.पी., "पोलिटिक्स इन इण्डिया 1947–87", विकास प्रकाशन, नई दिल्ली, 1988
बसु दुर्गादास, "भारत का संविधान एक परिचय", लैक्सिस नेक्सिस प्रकाशन, 2014
बसु, डी.डी., "कॉन्सीटीट्यूशन ऑफ इण्डिया", प्रेंटिस हॉल ऑन इण्डिया, दिल्ली, 1991
धर्मवीर,"परिवर्तन एवं विकास का समाजशास्त्र", राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, जयपुर 2015
धवन, राजीव, "नौवीं अनुसूची को अलविदा कहने का समय आ गया", हिन्दुस्तान टाईम्स, संपादकीय 27 जनवरी 2007
इन्दा, उम्मेद सिंह, "संसदीय व्यवस्था में परिवर्तन की दिशा", कल्पज पब्लिकेशन,दिल्ली, 2010
गहलोत, एन.एस., "इण्डियन गर्वमेंट एण्ड पोलिटिक्स", रावत पब्लिकेशन, जयपुर 1996
जोहरी जे. सी. "इण्डियन पोलिटिक्स सिस्टम", अरनोल पब्लिकेशन, नई दिल्ली, 1977
जोन, मोरियस, डब्ल्यू.एच., "द गर्वमेण्ट एण्ड पोलिटिक्स इन इण्डिया", हचिसन एण्ड क. लंदन, 1964
जोहरी, जे.सी., "भारतीय राजनीतिक व्यवस्था", एस.बी.पी. डी. पब्लिकेशन्स, आगरा, 2014
काश्यप, सुभाष, "संविधान सपने और समाधान", राजस्थान पत्रिका, 26 जनवरी, 2008
काश्यप, सुभाष "हमारा संविधान", नेशनल बुक ट्रस्ट, नई दिल्ली, 2001
कोठारी, रजनी, "पोलिटिक्स इन इण्डिया", आरियन्ट लॉग मैन लिमिटेड, दिल्ली, 1965
माहेश्वरी, एस.आर., "स्टेट गर्वमेण्ट इन इण्डिया" मेक मिलेन पब्लिकेशन, नई दिल्ली 1979
मंगलानी, रूपा, "भारतीय शासन एवं राजनीति", राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, जयपुर 2015
मुकर्जी, रविन्द्रनाथ, "भारत में सामाजिक परिवर्तन", विवेक प्रकाशन, दिल्ली 2006
माल्या, एम.एन., "इण्डियन पार्लियामेण्ट", नेशनल बुक ट्रस्ट पब्लिकेशन, नई दिल्ली 2008
नारंग, ए.एस., "भारतीय शासन एवं राजनीति", गीताञ्जली पब्लिशिंग हाउस, 2004
पाण्डे, बी.पी. "इश्यू इन इण्डियन पोलिटिक्स", दुर्जन पब्लिकेशन, नई दिल्ली, 1985
पायली, एम.वी., "कॉन्सीटीट्यूशन गर्वमेण्ट एण्ड पॉलिटिक्स इन इण्डिया", उप्पल पब्लिकेशन, नई दिल्ली, 1997
सईद, एस.एम., "भारतीय राजनीतिक व्यवस्था", भारत बुक सेन्टर, लखनऊ, उत्तरप्रदेश 2015
सिवाच, .जे. आर., "भारत की राजनीतिक व्यवस्था", नई दिल्ली 1992
शर्मा, के.एल., "भारतीय सामाजिक संरचना एवं परिवर्तन", रावत पब्लिकेशन्स, नई दिल्ली, 2010
शर्मा, के.एल., "भारतीय संविधान की पुनर्संरचना", राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, जयपुर 2007
सिंह, महेन्द्र प्रसाद, "भारतीय शासन एवं राजनीति", ओरियंट ब्लेकस्वान पब्लिकेशन, नई दिल्ली, 2011
सिंह, महेन्द्र प्रसाद एवं हिमांशुराय, "भारतीय राजनीतिक प्रणाली संरचना, नीति और विकास", हिन्दी माध्यम कार्यान्वय निदेशालय, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली 2016
वीनर मायरन, "स्टेट पॉलिटिक्स इन इण्डिया" युनिवर्सिटी प्रेस, 1968
व्हेयर के.सी., "फेडरल गर्वमेण्ट" ऑक्सफोर्ड युनिवर्सिटी प्रेस, नई दिल्ली 1953
ठाकुर रमेश, "द गर्वमेण्ट एण्ड पोलिटिक्स ऑफ इण्डिया", मेक मिलेन प्रेस लिमिटेड, लंडन 1995
श्रीनिवास, एम.एन., "सोशल चेंज इन मॉडर्न इण्डिया", एलायड पब्लिशर्स, दिल्ली, 1966

समाचार पत्र एवं पत्रिकाएँ

इन्टरनेशनल पॉलिटिक्स साइंस रिव्यू, सेज नई दिल्ली।
सोशियोलोजिकल बुलेटिन, जर्नल ऑफ इण्डियन सोशियोलोजिकल सोसायटी, नई दिल्ली।
लोकतंत्र समीक्षा, नई दिल्ली
इकोनोमिक एण्ड पोलिटिकल वीकली, समीक्षा ट्रस्ट पब्लिकेशन्स, मुम्बई
राज्य शास्त्र समीक्षा, राजनीति विज्ञान विभाग, राजस्थान विश्वविद्यालय, जयपुर
हिन्दूस्तान टाइम्स, नई दिल्ली
द हिन्दू, नई दिल्ली।